संस्कृति प्रवाह

SANSKRITI PRAVĀHA

NORTH CENTRAL ZONE CULTURAL CENTRE, ALLAHABAD

संस्कृति प्रवाह
SANSKRITI - PRAVĀHA

प्रवेशांक

[अक्टूबर १९८७]

उत्तर-मध्य क्षेत्र सांस्कृतिक केन्द्र, इलाहाबाद

Contents

सम्पादकीय

ज्ञानगुरु भारत की अपनी प्रवहमान संस्कृति एवं सांस्कृतिक परम्परा है। इसी सांस्कृतिक परम्परा के कारण ही यह देश विश्व का सिरमौर है। यहां की संस्कृति पर्वतों, गुफाओं, सुदूर ग्राम्यान्चलों में बसे ग्रामीण जनों के बीच सुरक्षित है। इन्हीं के संरक्षण सम्बर्धन के लिये देश में सांस्कृतिक केन्द्रों की स्थापना की गयी। उन्हीं में से एक है उत्तर मध्य क्षेत्र सांस्कृतिक केन्द्र इलाहाबाद। इसके अन्तर्गत उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश, बिहार, राजस्थान, हरियाणा तथा केन्द्र शासित प्रदेश दिल्ली आते हैं।

संस्कृति प्रवाह उत्तर मध्य क्षेत्र सांस्कृतिक केन्द्र की मासिक पत्रिका है। भारतीय संस्कृति एवं कला के शास्त्रीय तथा लोककला के विविध रूपों की जानकारी जन-जन के सम्मुख पहुँचाना ही इसका मुख्य उद्देश्य है। पत्रिका में लोक, संस्कृति एवं कला के विविध पक्षों में हो रहे प्रयासों, मुख्यतः विभिन्न केन्द्रों की गतिविधियों की जानकारी प्रकाशित होगी। *संस्कृति प्रवाह* में साहित्य, संस्कृति, संगीत, कला तथा चिन्तन के विविध वर्तमान पक्षों को रेखांकित करने वाले विद्वानों के आलेख आमंत्रित कर हम सादर प्रकाशित करेंगे।

पत्रिका के प्रवेशांक हेतु हमें देश व नगर के लब्धप्रतिष्ठ साहित्यसेवियों के आलेख प्राप्त हुए, हम उनके आभारी हैं। पत्रिका के आवरण एवं मुद्रण के लिये हम शाकुन्तल मुद्रणालय के विशेष आभारी हैं। यह हमारा प्रथम प्रयास आप सभी सुधीजनों द्वारा समादृत होगा, यही आशा एवं विश्वास है।

ज्ञानदीप का यह पुंज सबको आलोकित करने हेतु प्रज्ज्वलित किया गया है। इसकी दीपवर्तिका को आपके स्नेहिल संरक्षण की आकांक्षा है।

विशेष साक्षात्कार

डॉ० रामकुमार वर्मा

[डॉ० रामकुमार वर्मा से श्री लालता प्रसाद द्विवेदी की बातचीत]

हिन्दी साहित्य के लब्धप्रतिष्ठ साहित्यकार, एकांकी के जनक, छायावादी काव्य धारा के स्तम्भ एवं भारतीय संस्कृति के अनन्य उपासक डॉ० रामकुमार वर्मा का जन्म 15 सितम्बर 1905 को, हुआ था। डॉ० वर्मा ने साहित्य की अनवरत साधना की और हिन्दी साहित्य जगत को 17 काव्य ग्रन्थ, 25 नाटक, 24 एकांकी, 8 आलोचनात्मक ग्रन्थ तथा 5 शोधग्रन्थ दिये, उन्होंने 13 ग्रन्थों का सम्पादन किया जो हिन्दी की अमूल्य निधि है।

डॉ० वर्मा जी को उनके उत्कृष्ट साहित्य के लिये 1984-85 के भारत भारती पुरस्कार से सम्मानित किया गया। बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी डॉ० वर्मा ने साहित्य की अनेक विधाओं को अपनी लेखनी से नवीन दिशा दी है। सम्प्रति वे महाकाव्य 'इन्द्र' एवं अनेक नाटकों के सृजन में व्यस्त हैं। 82 वर्षीय डॉ० वर्मा से उनके विराट् व्यक्तित्व तथा महान कृतित्व के सन्दर्भ में उनके आवास साकेत में हुई विस्तृत बातचीत के प्रमुख अंश—

प्रश्न—आपको साहित्य सृजन की प्रेरणा किससे, कब और कहाँ मिली ?

उत्तर—साहित्य के सृजन की प्रेरणा एवं उसके लिए वातावरण मुझे परिवार में ही मिला। माता संगीतज्ञा थीं एवं पितामह ब्रजभाषा की कवितायें किया करते थे।

सन् 1921 के राष्ट्रीय आन्दोलन में देश में एक चेतना आयी, गांधी जी ने असहयोग आन्दोलन की शुरुआत की, इसी बीच मौलाना शौकत अली से भेंट हुई, उस समय मैं कक्षा 9 का विद्यार्थी था। मैंने स्कूल छोड़ दिया। उन दिनों राष्ट्रीय चेतना की कवितायें पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती थीं, जिन्हें आन्दोलन के दौरान प्रभात फेरी में गाया जाता था। इसी प्रेरणा ने मुझे गीत लिखने को प्रेरित किया। मैंने राष्ट्रीय चेतना के गीत लिखे और वहीं से अनवरत काव्य के सृजन की परम्परा चली और आज भी उसी परम्परा में सृजन कर रहा हूँ।

प्रश्न—आपकी अधिकांश रचनाओं के पात्र पौराणिक व ऐतिहासिक ही हैं। ऐसा क्यों ?

उत्तर—मैं भारतीय संस्कृति का अनन्य उपासक हूँ। हमें अपनी संस्कृति पर गर्व है। हमारे देश में महान् विभूतियों ने जन्म लिया, उनके प्रेरणाप्रद व्यक्तित्व से समाज को

प्रेरणा लेनी चाहिये । रामायण और महाभारत के केन्द्रीय संन्देश से भटकी मानवता को शान्ति मिल सकती है । धर्म में मेरी गहरी आस्था एवं विश्वास है, यही कारण है कि मेरे पात्र पौराणिक हैं । इन पात्रों के माध्यम से समाज को एक दिशा देने का प्रयास किया है ।

प्रश्न—भारतीय संस्कृति एवं पौराणिक कथानकों पर रचना करने वालों पर पुरातनवादी होने का आरोप लगता है । क्या आप सहमत हैं ?

उत्तर—नहीं ! भारतीय संस्कृति और दर्शन भारत की शक्ति है । भारतीय संस्कृति व उपनिषद् समाज के लिये उपयोगी हैं । महाकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने उपनिषद् को आधार बनाकर रचनायें कीं, उन्हें नोबिल पुरस्कार मिला । उन्हें कौन नहीं पढ़ता, उनका सम्मान कौन नहीं करता । सभी करते हैं विश्व उन्हें जानता है । पुरातनवादी होने का आरोप विदेशी साहित्य से प्रभावित भटके लोग ही करते हैं जिन्हें भारतीय संस्कृति एवं भारत से लगाव नहीं है । वे वस्तुवादी लोग हैं । साहित्य की रचना ड्राइंग रूम में बैठकर करते हैं । भारतीय संस्कृति का साक्षात्कार गाँवों में जाकर किया जा सकता है । भारतीय लेखक को भारत का साहित्य पढ़ना चाहिये । पश्चिम की प्रगतिशील विचारधारा के लोगों को भारतीयता की ओर वापस लौटना पड़ेगा ।

प्रश्न—आज समाज में नैतिक मूल्यों का ह्रास हो गया है, ऐसे में साहित्यकार की भूमिका क्या होगी ?

उत्तर—आज समाज वस्तुवादी हो गया है, वह अपने लक्ष्य से भटक गया है । धर्म से विमुख लोगों में चरित्र का ह्रास हुआ है । साहित्यकार पश्चिम की नकल कर रहा है । साहित्यकार ने हर युग में समाज को एक मूल्य दिया है, दिशा दी है और वही दिशा दे सकता है ।

प्रश्न—आपने काव्य, गीत एव नाटक लिखे हैं । क्या आप कविता की वर्तमान स्थिति से सन्तुष्ट हैं ?

उत्तर—कविता की वर्तमान धारा काव्यात्मक गुणों से परे हो गयी है, उसे पुनः वहीं लौटना होगा । काव्य वही है जो जन-जन का रंजन करे, दिशा दे । वर्तमान कविता की धारा पश्चिम की मात्र नकल है ।

प्रश्न—भारतीय संस्कृति एवं नैतिक मूल्यों में ह्रास आया है । क्या आप सहमत हैं ? राष्ट्रीय एकता के सन्दर्भ में हम आपके विचार जानना चाहेंगे ।

उत्तर—समाज धर्म से विमुख हो गया है यही कारण है कि नैतिक मूल्यों में ह्रास आया है । देश की सांस्कृतिक चेतना को जगाना होगा । इसीसे हमारी राष्ट्रीय एकता सुदृढ़ होगी । समाज को भारतीय सांस्कृतिक, विरासत से परिचित कराना होगा । युवा पीढ़ी को उपनिषद्, वेद, महाभारत एवं समस्त भारतीय साहित्य का ज्ञान विशेष रूप से कराया जाना चाहिये ।

प्रश्न—हिन्दी की वर्तमान स्थिति से क्या आप सन्तुष्ट हैं ?

उत्तर—हिन्दी हमारी मातृभाषा है। इसे सर्वोच्च सम्मान मिलना चाहिये। हिन्दी को उचित स्थान दिलाने के लिए लेखकों को आगे आना चाहिये।

प्रश्न—आपने साहित्य की विभिन्न विधाओं में समान गति से रचना की है। इधर क्या लिख रहे हैं।

उत्तर—हाँ ! यह सच है कि मैंने सभी विधाओं में रचना की है। काव्य, नाटक, आलोचना, निबन्ध इत्यादि। आजकल मैं 'इन्द्र' नामक काव्य, एवं 'संकेत' नामक नाटक की रचना कर रहा हूँ जो शीघ्र पूरा हो जायेगा।

प्रश्न—'इन्द्र' नामक काव्य के पीछे उद्देश्य क्या है ?

उत्तर—हर रचना सोद्देश्य होती है। भारत कृषि प्रधान देश है। सूखे की वर्तमान स्थिति देख कर मुझे बड़ी पीड़ा हुई इन्द्र वर्षा का देवता है, इन्द्र मेघों का स्वामी है वह निर्मम, उदासीन हो गया है, मैं उसे खरी खोटी सुनाऊँगा। 'इन्द्र' एक प्रतीक काव्य है। मैं 'संकेत' नाटक की भी रचना कर रहा हूँ जो शीघ्र प्रकाशित होगा।

प्रश्न—क्या आप साहित्य की वर्तमान स्थिति से सन्तुष्ट हैं ? आने वाली पीढ़ी के लिये कोई सन्देश ?

उत्तर—साहित्य की धारा में भी समय-समय पर अनेक मोड़ आये हैं, लेकिन वर्तमान साहित्य धारा भारतीय परिवेश के अनुरूप नहीं है। तुलसी, सूर, कबीर, के पदों में लालित्य है, संदेश है। साहित्यकारों को प्राचीन भारतीय साहित्य से प्रेरणा लेनी चाहिये। यथार्थ का साक्षात्कार करके साहित्य रचना चाहिये। नयी पीढ़ी को भारतीय संस्कृति से जुड़कर रचना करनी चाहिये, जिससे समाज को दिशा मिले। क्योंकि साहित्यकार ही पथ प्रदर्शक होता है।

● ●

कांगड़ा चित्रशैली

डा० रामकुमार विश्वकर्मा

भारत में अनेक सामाजिक एवं राजनैतिक उथल-पुथल के बावजूद यहाँ कला, साहित्य व संगीत की सुदृढ़ परम्परा बनी रही है। यही कारण है कि युगबोध के ऊपर भी इनका दर्शन मानवीय चेतना पर बराबर छाया रहा और कभी भी बिखरा नहीं दिखायी पड़ता। भारतीय कला, काव्य एवं संगीत का अन्योन्याश्रित सम्बन्ध इसी दर्शन का समरूपी प्रतिफल है। परन्तु कला-पोषकों की लम्बी परम्परा के बाद औरंगजेब की अनुदारता एवं कट्टरपन के कारण 1660 ई० के आस-पास मुगलों के दरबारी चित्रकार मुगल दरबार छोड़कर पहाड़ी रियासतों कांगड़ा, जम्मू, बसौली, चम्बा, टेहरी गढ़वाल, गुलेर आदि स्थानों में जा बसे और इन चित्रकारों ने एक अद्भुत चित्र शैली का विकास किया जो पहाड़ी चित्रकला के नाम से विख्यात हुई। कुछ विद्वानों का यह भी मत रहा है कि पहाड़ी शैली के चित्रों का निर्माण इसके पूर्व भी होता रहा है, लेकिन मुगल शैली के दरबारी चित्रकार जो बारीक कलम में सिद्ध-हस्त थे उनके मेल से जो कलाकृतियाँ निर्मित्त हुईं वे अदभुत और जगत प्रसिद्ध हुई। इन चित्रों में पहाड़ी क्षेत्रों के लोगों का सौन्दर्यमय जीवन अभिव्यंजित हुआ है।

सत्रहवीं शताब्दी के अन्तिम चरण में राजा कृपाल सिह (सन् 1678–1763) के संरक्षण में जम्मू की पहाड़ियों में बसोहली शैली का विकास हुआ। इस शैली में भागवत पुराण सम्बन्धी चित्रों की रचना मिलती है। अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध (सन् 1750 से आगे) में पहाड़ी चित्रकला अपना स्वतन्त्र विकास कर पायी और उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य में यह कला अपने नये आयाम स्थापित कर चुकी थी। 1790 से 1805 ई० के मध्य कांगड़ा शैली अपने उच्चतम शिखर पर पहुँच गयी और सुन्दरतम कलाकृतियों का निर्माण हुआ।

कांगड़ा की इस कलात्मक थाती ने ही विविध रूपों में विकसित होकर प्रभावशाली अन्य पहाड़ी शैलियों को उद्भूत किया और अपनी समन्वयात्मक प्रकृति के कारण अन्त तक उसने अपनी उन सहयोगी शैलियों के साथ अपना अटूट सम्बन्ध बनाये रखा। इन विभिन्न शाखाओं ने अपने भौगोलिक वातावरण की असमान परिस्थितियों को ग्रहण कर पारस्परिक सहयोग-सद्भाव के बीच अपने-अपने परम्परागत स्वतत्वों को समान रूप से उन्नत बनाये रखा और जम्मू, गढ़वाल, पठानकोट, कुल्लू, चम्बा, बसोहली, गुलेर और मण्डी आदि के विभिन्न पर्वतीय प्रान्तरों की जितनी भी चित्र शैलियाँ हमारे समक्ष विद्यमान हैं उनमें स्वतन्त्र अस्तित्व स्थापित हो चुका है।

पहाड़ी चित्रकला के प्रसंग में आज जिस कांगड़ा शैली से परिचित हैं उसका उद्भव अठारहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में ही हो चुका था, फिर भी इस शताब्दी के अन्तिम चरण में वह अपने निखरे कलेवर में दिखायी पड़ती है। प्राचीन साहित्य व संगीत को रंग और रेखाओं के माध्यम से इस रूप में मुखरित करती नजर आयी है कि संसार भर में वह अपना समकक्ष नहीं रखती। 16वीं शताब्दी से लेकर 19वीं शताब्दीं के उतरार्द्ध तक यह शैली पनपकर समाप्तप्राय कला आन्दोलन में जो विशिष्टतम रही वह कांगड़ा शैली है। पहाड़ी चित्रकला की यह अन्यतम उपलब्धि कांगड़ा शैली कांगड़ा के शासक महाराज संसार चन्द (1775–1823) के राज्य काल की देन थी। एम० एस० रन्धावा की यह टिप्पणी उल्लेखनीय है—"कला दिल्ली मुगल दरबार के दुर्गन्धमय वातावरण से निकल कर पंजाब—पहाड़ियों की स्वच्छ वायु में पहुँची। यहाँ कलाकारों से यह अपेक्षित न था कि वे अपने मालिकों के प्रशंसापूर्ण चित्र बनायें या राजाओं तथा अन्य दरबारियों की विलासमय घटनाओं को उद्धृत करें। सहज घुमाव और प्रवहमान रेखाओं से युक्त मुगल शैली ने अन्ततः कांगड़ा घाटी की रमणीय वनस्थलियों के चित्रण में पूर्णता प्राप्त की। मुगल चित्रकला ने शैली, रूप-चित्र, दरबारी शान, तड़क-भड़क और शिकार के दृश्यों के अंकन में एक बहुत बड़ा स्तर प्राप्त किया था। मुगल बादशाहों, बेगमों तथा दरबारियों के रूप-चित्र निःसंकोच अति उत्तम रचनायें हैं और ऐतिहासिक महत्व रखती हैं। फिर भी जिस कला का मुख्य उद्देश्य व्यक्तिगत उपलब्धि का गुनगान करना है उसका महत्व स्थायी नहीं हो सकता। पथ-भ्रष्ट कुलीनों के प्रेमालाप और शरीर सम्ब्रन्धी व्यापार भी किसी कला को जन्म दे सकते हैं, लेकिन उस महान कला को नहीं जो मानवता को अनुप्रेरित करती हैं।

मैट्काफ सब से पहले व्यक्ति थे जिन्होंने इन चित्रों को कांगड़ा में प्राप्त किया। 1916 ई० के आसपास डा० आनन्द के० कुमार स्वामी ने इन चित्रों को खोज कर विश्व के समक्ष प्रस्तुत किया। 1926 ई० में ओ० सी० गांगुली की कृति 'मास्टर पीसेज़ आफ राजपूत पेंटिंग' का प्रकाशन हुआ जिसमें कांगड़ा कलम की सुन्दर कृतियाँ उद्धृत हुईं। 1931 ई० में जे० सी० फ्रेंच द्वारा लिखित "हिमालयन आर्ट" नामक पुस्तक में अनेक पहाड़ी शैली के चित्र प्रकाशित हुए। 1952 में डब्लू० जी० आर्चर की दो पुस्तकें "इण्डियन पेटिंग इन द पंजाब हिल्स" और कांगड़ा पेटिंग प्रकाशित हुई। कार्ल खण्डलवाला की बृहत् पुस्तक" पहाड़ी मिनिएचर पेटिंग में बहुत सी खोज पूर्ण सामग्री उपलब्ध हुई। यह कहना अनुचित नहीं होगा कि कांगड़ा कलाकृतियों का उद्गम भित्ति-चित्रों की ऐसी परम्परा है जिसका आरम्भ अजन्ता के भित्ति चित्रों से होता है। लारेंस विनियोन का मत है—"कांगड़ा कलाकृतियों का उद्गम भित्ति चित्रों से हुआ है। जिन प्राचीनतम उदाहरणों के सम्बन्ध हमें मालूम है, यद्यपि शायद वे बहुत ही कम है, वे भी 17वीं शताब्दी के पहले के हैं और अपूर्व रूप से प्राचीन है: जीवंत प्रकृति के निरूपण के स्थान पर उन्होंने पारस्परिक विधि को चुना है लेकिन भित्ति चित्रों के अनुकूल ही उन्होंने बृहद् विधान को धारण किया है।" लगभग इसी प्रकार से पर्सी ब्राउन महोदय ने भी लिखा है—राजपूत चित्रकला जो इसी नाम से अभिहित हुई है, अपनी अभिव्यक्ति में विशिष्टतया हिन्दू है और इसके विभिन्न रूपों से यही पता चलता है कि यही भारत की स्वदेशी कला है और अजन्ता के पुरातन भित्ति चित्रों की सीधी थाती है।"

कांगड़ा शैली से सम्बन्धित तीन कला केन्द्र देखने में आते हैं—गुलेर, नूरपुर और टीरा-सुजानपुर। गुलेर में प्राचीनतम चित्रकला पनपी क्योंकि गुलेर और नूरपुर पंजाब के मैदानी इलाकों से अपेक्षतया समीप रहे। इन रियासतों के शासकों का मुगल दरबार से बराबर सम्पर्क बना रहा है इसलिये दिल्ली से प्रभावित होना स्वाभाविक था। कांगड़ा शैली के दो प्रमुख केन्द्र आलमपुर और टीरा-सुजानपुर रहे हैं। कांगड़ा शैली को वहाँ के जिन राजाओं ने प्रश्रय दिया उनमें हमीरचन्द (1700–47)

अभयचन्द (1747–50) घमण्ड चन्द (1751–74) और संसार चन्द (1775–1823) के नाम उल्लेखनीय है।

कांगड़ा शैली का विषय अधिकाशतया चित्रकला, संगीत और काव्य तीनों का समन्वित रूप मिलता है। कृष्ण लीला का अंकन राजा संसार चन्द की व्यक्तिगत रुचि के अनुकूल ही नहीं रहा अपितु चित्रकारों की अपनी रुचि के अनुकूल भी था। महाराजा संसारचन्द के समय में ही भागवत पुराण, जयदेव लिखित गीत-गोविन्द, बिहारी सतसई, केशवदास लिखित रसिक प्रिया और कविप्रिया तथा नल-दमयन्ती की प्रणय कथा और रागमाला चित्रित हुई। कृष्ण जीवन की बहुविध लीला को अत्यन्त नयनाभिराम ढंग से प्रस्तुत किया गया है। रामायण और महाभारत को भी कांगड़ा शैली के चित्रकारों ने चित्रित किया है। प्रेम का ऐसा भावमय लयात्मक गेयतापूर्ण एवं कलात्मक चित्रण अन्यत्र देखने को नहीं मिलता। इसके दोनों पक्षों संयोग एवं वियोग की अद्भुत अभिव्यक्ति हुई है। इसके अतिरिक्त व्यक्ति-चित्र, सुदामा चरित्र, रुक्मिणी मण्डल, उषा चरित्र, पदमावत, गंगावतरण, हरिवंश पुराण तथा नन्द दास कृत "रास पंचाध्यायी" आदि काव्यों को आधार मानकर अनेकों उच्चकोटि के चित्रों का सृजन किया गया है।

कांगड़ा शैली के चित्रकारी में—फत्तू, कुशनलाल या कुशला, बसिया, पुरखू प्रमुख हैं। अधिकांश चित्रकार कहीं चित्र के पीछे नाम लिखते थे या नाम लिखते भी नहीं थे। महाराजा संसारचन्द्र के समय जो चित्रकार कार्य करते थे, उनके नामों का पता चलता है। जिनमें कुशला और मानकू का नाम उल्लेखनीय है। पुरखू चित्रकार की प्रशंसा और उसकी हाथ की सफाई तथा कोमलता का बेड़न पीवेल ने उल्लेख किया है। कांगड़ा दरबार से सम्बन्धित पदमू और दोखू नामक दो अन्य सिद्धहस्त चित्रकारों का पता चला है। सिमलौटी गाँव जिला कांगड़ा में गुलाबराम चित्रकार जो अभी भी चित्र बनाता था उसने अपने पूर्वजों की एक वंशावली प्रस्तुत की है—
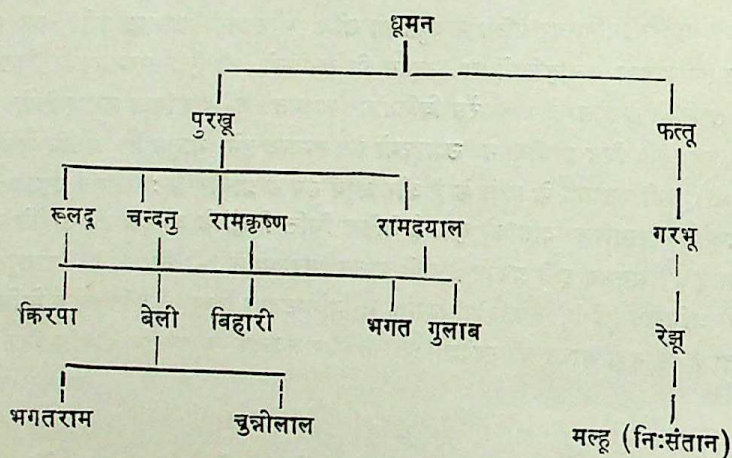
भारतीय चित्रकला के मर्मज्ञ विद्वान डब्लू० जी० आर्चर ने कांगड़ा शैली के आरम्भिक कलाकृतियों को पश्चिम से प्रभावित माना है। इन कृतियों में लयात्मक संगीतमय रेखायें, उसकी सामान्य प्राकृतिक सुषमा, उसके नारी-आकारों का चित्रण, उसकी कल्पित कहानी का आधार—ये सभी बातें

रागिनी देवगंधारी (कांगड़ा 1815-1820 ई०)

पश्चिम की कला और कविता के अनुरूप सिद्ध होती है। परन्तु आज जिस रूप में कांगड़ा शैली के चित्रों की स्थिति हमारे सामने विद्यमान है उसको देखते हुए कदाचित ही यह बात प्रमाणिक और सही उतरती हो। जब हम चित्रकला, काव्य और संगीत के समन्वय की बात करते हैं तो कांगड़ा शैली ही ऐसी है जहाँ राग-रागिनियों को उनके अंग प्रत्यंग और वातावरण के साथ सुन्दर ढंग से रूपायित किया गया है। राग-रागिनियों का चित्रण भले ही राजस्थानी चित्रकला में देखने को मिल जाय लेकिन जिस सजीवता से कांगड़ा शैली में ऐसे चित्र सर्जित हुए हैं वे अनुपम है [देखिये चित्र]

रेखाओं का प्रवाह, रंगों का संयोजन, लयात्मक आकृतियों की क्रियाशीलता वस्तुओं आदि में संतुलन, प्रकृति का मनोरम चित्रण, इन सभी में कांगड़ा शैली की अपनी देन है, उसकी विशिष्ठता है। चित्र अपनी सम्पूर्णता में मन को खींचता है उसे रस विभोर करता है। एम० एस० रन्धावा के शब्दों में "काव्य का चित्रकला में रूपान्तर ही कांगड़ा कला का अद्वितीय गुण है। काव्य की पीठिका में प्रवहमान लयात्मक रेखाओं ने कांगड़ा कला को गेयता दी है। इसे सहज ही शांत संगीत कहा जा सकता है! यह वह कला है जो मोजार्त के संगीत की तरह आपको मंत्र मुग्ध करती है। इन चित्रों के मौन संगीत में प्रशामक गुण और मानसिक व्यथा के कठिन क्षणों में आप इन चित्रों में सांत्वना पा सकते हैं। यह वह कला है जो मन को सुखकर प्रतीत होती है और आत्मा को ऊँचा उठाती है।

कांगड़ा शैली में लयात्मक रेखायें तथा रमणीय रंगों के कोमल संयोजन से उसके लघु चित्रों को नयन-रम्यता का गुण मिला है। आकृतियों के आलेखन तथा प्रकृति के रूपायन में रंगों की महारत और कोमल वर्ध कारिता का विशेष रूप से ध्यान आकृष्ट करती है।

कांगड़ा शैली के चित्रों की स्त्री मुखाकृतियों में दो तरह का चित्रण मिलता है। एक में तो यथोचित गोलाई, गढ़नशीलता तथा सुडौलता है। दूसरे प्रकार की मुखाकृतियों के गढ़नशीलता में कुछ कमी आ गयी है। परन्तु अधिकांश स्त्रियों के रूप-विन्यास में कलाकार ने कमाल कर दिया है। यौवन और लज्जा से पूर्ण, गुलाबी चेहरा सर्वाधिक प्रभावशाली है। चेहरों के निर्माण में कोमल छाया का भी प्रयोग किया गया है। उंगलियों में लयात्मकता है। नारियों के केश नागिन की भांति लहराते रंग में बनाये गये हैं। यह केश पारदर्शी दुपट्टे में नागिन का भ्रम उत्पन्न करते हैं। मुखाकृतियों के निर्माण में विशेषतया एक चश्म चेहरों का प्रयोग मिलता है। कांगड़ा का चित्रकार नारियों के चित्रण में पूर्णतया सर्तक रहा है। उसने भारतीय परम्परागत आदर्श रूप को ही प्रदर्शित किया है।

पशु-पक्षियों का बड़ा भावपूर्ण चित्रण कांगणा के चित्रों में मिलता है। वर्षा में बगुला, विरह में सारस या मोर आदि को मानव-भावना के अनुकूल चित्रित किया गया है। कृष्ण के संग गायों का सजीव चित्रण अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

पहाड़ी चित्रकला ने कांगड़ा शैली के रूप में अपनी सुन्दर कलात्मक कृतियां प्रस्तुत की थीं लेकिन महाराजा संसारचन्द की मृत्यु के बाद इसके भरण-पोषण की स्थिति का अन्त हो गया। साथ ही इस पहाड़ी कला का भी अन्त हो गया।

● ●

Allahabad

A City of Composite Cultures

By S. K. Dubey

●

Allahabad, known as Prayāga since time immemorial, has been a place where various religions and cultures were fused together to make the world a better place to live in. Allahabad, as we see it today has not been a city, but a place where Yagñas of the highest order were performed by Vishnu, Brahmā, Soma, Varuṇa and Indra.

The earliest reference to Prayāga is found in a "richā" (śloka) of the Rigveda which describes the importance of a dip at the Sangam. It says that those who bathe at the Sangam attain salvation, the highest reward promised to a devout in the Hindu religion.

Here, in Prayāga lived Sage Bhāradwāja some 5000 years before the birth of Christ, teaching 10,000 disciples and spreading celestial knowledge. The Vedic age is considered the oldest. According to Lok Manya Bāl Gangādhar Tilak, the Vedic age is some 8,000 to 6,000 years before the birth of Christ. If one takes a liberal view, the Vedic age may be fixed at 5,000 years before the birth of Christ.

The Rigveda is considered the oldest. In it's Shakal Saṁhitā, there is a reference to Bhāradwāja. Numerous Vedic Mantrās and the VI Mandal of the Rigveda are credited to Sage Bharadwāja, who was a philosopher, exponent of Vedic knowledge, a scientist, a foreteller, a Yogi and a great teacher.

Prayāga has been a meeting point of spiritual heads, intellectuals, saints and seers, great mahātmās, yogīs and Sanyasins, who in the month of Māgha every year, at Ardh Kumbh fair every sixth year and at Kumbh fairs every 12th year, assembled at the sandy bed of the Sangam to exchange knowledge, to discuss cosmic reactions and perform religious ceremonies, Yagñas, pooja etc. to appease Gods and Goddessses and Veni Madhao, the presiding deity of Prayāga, to ward off evils, which would, otherwise, have afflicted humanity.

Mini India gathers at Prayāga in the month of Māgha when annual Māgha mela is held. To a foreigner, the diversities of Indian life, the geographical features, dresses, food habits, systems of worship of Gods and Goddesses, different languages and dialects it would appear to be a land of several nations till he finds the underlying bond of oneness which unites the Indians.

A perplexed Mark Twain, an American humorist, after a visit to 1894 Kumbh Fair, made the following remarks in his book, *More Tramps Abroad*—

"This is indeed India, a nation of hundred nations, of thousand tongues and million Gods............................It is a birth place of human speech, cradle of humanity, mother of languages, grandmother of legends, a nation which everyone likes to see and after seeing it once would not part with that glimpse for the show of the rest of the world combined".

"It is wonderful", he further writes, "the power of a faith like that, that can make multitudes upon multitudes of the old and the weak and the young and the frail to enter without hesitation or complaint upon such incredulous journeys and endure the resultant miseries without repining". He adds, "No matter what the impulse is, the act born of it is beyond imagination, marvellous to his kind of people, the cold whites.

Lord Buddha came here followed by Kumārila Bhaṭṭa, Ādi Shankarāchārya, Chaitanya Mahāprabhu, Vallabhācharya and Maharshi Ḍayānand, who spread their respective cults of religion in and around

Allahabad. Āchārya Rāmānanda, a great Vaishṇava saint, was born at Prayāga. Thus Buddhism, Vedic Dharma, Rāma Bhakti and Krishna Bhakti movements flourished together.

The archaeological explorations throw interesting light on this ancient city from about 8th century B. C. to seventh century A D. It's religious significance has been described in the Vālmīki Rāmāyaṇa, the Mahābhārata, the Purāṇas, the Dharmashāstras, Smritis etc.

In the reign of Chandra Gupta II (4th-5th century AD) the Chinese Pilgrim Fa-hien visited Prayāga and Kausāmbī and Hiuen Tsang, another Chinese traveller, about the middle of 7th century AD. Both have left vivid accounts of Prayāga. The sun and the Jain dharmāchāryas were worshipped alike.

Renunciation at Prayāga has been a great tradition. Kings vied with each other in lavish distribution of gifts to the Brāhmins, the poor, heretics, pandās and others. Hiuen Tsang gives a detailed account of King Harsha of Kanauj visiting Prayāga every fifth year of his reign (7th century A.D.), holding religious assemblies and exhausting his kingly resources by generous gifts in the tradition of his ancestors.

A number of excavated copper plates indicate that Pratiṣthāna-purī or Jhusi had been the capital and Kauśāmbī a district under Gurjara-Pratihāra Kings of Kanauj, and Karā was also under it. Alberuni has written about the Akśhaiyavaṭa in the 11th century A.D.

Mughal emperor Akbar realised the importance of Prayāga where he started practising and encouraging a composite culture, realising that Hindus were a force to reckon with and he could not rule with peace till he brought Hindus in his fold and propagated a mixed culture. The name of Prayāga was changed by him as Subahi-llahabas (the province of Allahabad) and he brought the provinces of Jaunpur, and Kaṛā-Manikpur with the territories of Bandogarh (then ruled by Baghelas) under this provincial unit of Allahabad.

The Allahabad Fort is essentially a Hindu idea which included in it's premises, the Akshaiyavaṭa, the undying banyan tree, from

which people jumped to death with a belief of attaining salvation. The practice of suicide was thus banned. This fort has also a section housing images of Gods and Goddesses and was kept open for darsan known as Pātālpurī temple. The construction of this fort was started in the year 1583 as a residential-cum-military fort and the head-quarter of the province was moved to Allahabad.

The British took over Allahadad in 1801. Akbar had already laid the foundation for the development of the city by constructing three protective bunds linking the fort from three sides and leaving space in it's enclosures for the city's development. The British also realised the strategic importance of this city, and the Jamuna was made navigable by large vessels.

The British made Allahabad capital of the province in 1858 shifting it from Agra when administration of the country was taken over by the Crown. The municipal board was formed in 1863. Allahabad revolted against the British in 1857, the first war of Independence, when Maulvi Liyaquat Ali, supported by all sections of the people, declared himself as the provincial Governor and unfurled the flag of Independence on June 6, 1857 at Khusroobagh. Col. Neel subdued the revolt and on June 15, 1857 as many as 634 people were shot dead and their bodies left hanging for sometime to arouse terror. Hundred of women jumped into the wells to save their honour. The city has a tradition of unity, valour and sacrifice for honour.

The post-1857 era witnessed a period of great advancement. Allahabad became the cultural and educational centre of the northern provinces. The transfer of the High Court from Agra to Allahabad and the opening of the Muir Central College and also the University of Allahabad in 1887 brought a new life to the city and laid the foundation of the cultural and educational advancement of the whole of northern India.

The details given indicate that this city has been under the influence of the Vedic Age, Buddhism, Jainism, Hindusim, Islam, the Arya Samaj and Christianity. All these ideas and their cultures flourished together in the city.

The national fight for freedom in 1942 brought all the faiths together. The later half of the 19th century gave impetus to the development of Hindi and Urdu together in this city. On the literary side were Shridhar Pathak, Bālkrishna Bhatt, Madan Mohan Malaviya, Purushottam Das Tandon and on the political side Tej Bahadur and the Nehrus patronising Urdu. Akbar Allahabadi, Firaq Gorakhpuri, Bismil Allahabadi, Aijaz Husain, Ehitisham Hussain enriched Urdu and Prof. Zamin Ali, who was the first head of the Urdu Department opened in the University of Allahabad in 1924, prepared the syllabus of Urdu from primary level to the post-graduate level. Urdu today is being taught in 76 Universities and colleges all over the country.

Pt. Madan Mohan Malaviya established Banaras Hindu University and Rajashri Purushottam Das Tandon, Hindi Sahitya Sammelan and these institutions were linked with the fight for freedom. Anand Bhawan and Swaraj Bhawan attracted all the heroes of the national fight for freedom and Mahatma Gandhi, Subhas Chandra Bose, Chandra Shekhar Azad, Rafi Ahmed Kidwai, Ram Manohar Lohia, Dada Bhai Nauroji were frequent visitors. The liberal and revolutionary ideas flourished together in this town. None can forget the martyrdom of Chandra Shekhar Azad and Lal Padmadhar in Allahabad.

In recent times, Firaq took Urdu poetry to great heights. He introduced lasting ideas of beauty in Urdu poetry and awareness to modernity. Of stalwarts of mysticism in Hindi poetry Surya Kant Tripathi "Nirala", Sumitranandan Pant, Mahadevi Varma and Dr. Ram Kumar Verma belong to Allahabad.

In Praogvadi Hindi poetry tradition, Allahabad produced Dharmaveer Bharti, Jagdish Gupta, Ram Swaroop Chaturvedi, Lakshmikant Verma, Naresh Mehta and several others. Umakant Malviya excelled as a Hindi lyricist.

In the great tradition of mixed or composite cultures, the opening of the North-Central Zone Cultural Centre is welcome. This would, besides developing and preserving culture and art forms of the six states under the area of it's operation, work for fusing the great cultures on the Indian culture of unity in diversity bringing to the fore the oneness of spirit dominating the entire Indian society throughout it's length and breadth.

North Central Zone Cultural Centre, Allahabad

An Introduction

•

India is a country of varied cultures, traditions, customs, languages and religions. Each region has it's own contribution and individuality. Regional ideology and culture were born in this country, which in due course of time, developed into a unique civilization. With a view to preserve and promote the cultural traditions of this country, the Ministry of Human Resource Development, has set up seven cultural centres in different parts of India. One of such centres called *North Central Zone Cultural Centre*, has been established at *Allahabad*. This Zone represents the Union Territory of Delhi and the states of Haryana, Rajasthan, Madhya Pradesh, Uttar Pradesh and Bihar. The main objective of the Centre is to promote awareness in the Indian peoples about the rich and varied cultural heritage of India. Through it's manifold programmes, the centre aims to instil a sense of national and cultural integration among people.

The Centre has organized several cultural programmes in different parts of India including Allahabad. In the month of September, a Theatre was held at Allahabad. Later, in December, a national theatre festival will be held.

The centre is publishing a bi-annual Journal 'Sanskriti Sangam', too, besides a monthly magazine, 'Sanskriti Pravāha' which will mainly highlight the activities of the various centres. We also propose to bring out monographs, booklets and folders, related to various facets of India's

culture. There is also a plan to prepare an encyclopaedia of the arts and literature of North India.

The North Central Zone Cultural Centre has planned a series of illustrated lectures which are being held every month from October onwards. It is gratifying that eminent scholars of the country have agreed to deliver lectures.

●

Calender of Events

1987

North Central Zone Cultural Centre, Allahabad.

No.	Date	Place	Event
1.		2.	
			Month JANUARY, 1987
1.	23.1.87	Delhi	Full Dress Rehearsal Republic Day Parade '87 Item- "Sushir Vadya Kacheri (Wind Instruments of India)"
2.	26.1.87	Delhi	Republic Day Parade '87 Item - "Sushir Vadya Kacheri (Wind Instruments of India)"
			Month FEBRUARY, 1987
1.		Magh Mela at Sangam, Allahabad.	"CHALO MAN GANGA-JAMUNA TEER". A three day Festival consisting of three different colours of devotional songs, Folk songs and Folk Dances:
	9.2.87		(i) BHAKTI DHARA
	10.2.87		(ii) VASANT KE RANG
	11.2.87		(iii) LOK RANG
2.	20.2.87	Itanagar Arunanchal Pradesh	Cultural Programme on the occasion of granting statehood to Arunanchal Pradesh.

Sl. No.	Date	Place	Event
1.		2.	
			Month MARCH .1987
1.	10.3.87 - Two shows 11.3.87 - Two shows 12.3.87 - Two shows 13.3.87 - One show 14.3.87 - Two shows 15.3.87 - Two shows Total 11 programmes	Kohima, Nagaland	Our India Exhibition from 7th March to 15th March '87
2.	7th March '87 to 6th April '87	Allahabad (U.P.)	SAHYOG: One month long training Camp-cum-workshop in Folk Songs and Folk dances
3.	13th March 1987	Allahabad (U.P.)	Kavi Sammelan
4.	13th March 1987	Patna (Bihar)	Sanskritik Sandhya: Folk songs on the occasion of Holi
5.	12th, 13th and 14th March 1987	Bharatpur (Rajasthan)	Braj Mahotsav
6.	28th, 29th, 30th March 1987	Madras (Tamilnadu)	Madras Mahotsav organised by SZCC
7.	30th & 31st March 1987	Allahabad	Lecture Series by Prof. S.R. Rao, the renowned marine Archaeologist. 1. Discovery of the ancient city of Dwarka from the depths of the Ocean. 2. Indus Valley Civilization.
8.	30th March '87 31st March '87	Allahabad	Sanskritik Sandhya 1. Folk Dances 2. Puppet Show
9.	6th March '87 to 7th July '87	Allahabad	Four month Russian Language training programme

Sl.No.	Date	Place	Event
1.		2.	
			Month APRIL ,1987
1.		Andaman & Nicobar	DWEEP MAHOTSAV
	7.4.87	1. Port Blair	Organised by S.Z.C.C.
	8.4.87	2. Wimbartiganj	
	9.4.87	3. Rangat Dweep	
	10.4.87	4. Mayawander Dweep	
	11.4.87	5. Diglipur Dweep	
	13.4.87	6. Hut Bay	
	14.4.87	7. Dugang Creek	
	15.4.87	8. Car Nicobar	
	16.4.87	9. Kachal Dweep	
	16.4.87	10. Nankauri Dweep	
	17.4.87	11. Camp Bell	
	18.4.87	12. On board of the ship	
	20.4.87	13. Andeman	
	23.4.87	14. On board of ship	
2.	19th March to 18th April	Allahabad	SAHYOG: Training of camp of artists for folk music and folk dance.
3.	14th April '87	Allahabad	Sanskritik Sandhya
4.	15.4.87	Pratapgarh	Sanskritik Sandhya
5.	30.4.87	Allahabad	Ranga Rang Sanskritik Karyakram Three day Cultural Festival from 30.4.87 to 2.5.87
			Month MAY ,1987
1.	1.2May '87	Allahabad	Ranga Rang Sanskritik Karyakram (Three day Cultural Festival Contd.) (30th April to 2nd May '87)

Sl.No.	Date	Place	Event
1.		2.	
			Month MAY ,1987(contd.)
2.	3.5.87	Allahabad	Sanskritik Sandhya for Army Unit at their open air auditorium.
3.		In Garhwal region	Parvatiya Parva and Yatra in the Hills of U.P.
	25.5.87	Mussourie	
	26.5.87	Mussourie	
	27.5.87	Tehri	
	28.5.87	Uttarkashi	
		In Kumaun Region	
	25.5.87	Bhimtal	
	26.5.87	Almora	
	28.5.87	Pithoragarh	
			Month JUNE ,1987
1.	2,3,4 June'87	Gopeshwar	Parvatiya Parva in the Hills of U.P.
2.	4.6.87	Kausani	"
	5.6.87	Ranikhet	
3.	6,7, & 8 June '87	Nainital	"
4.	9.6.87	Nainital	Cultural programme for School children
5.	20.6.87	Allahabad	Magic show by Prof Anant Kumar
6.	28.6.87	Patna	Sanskritik Sandhya
7.	29.6.87	Patna	Sanskritik Sandhya

No.	Date	Place		Event
1		2		

Month JULY ,1987

No.	Date	Place		Event
1.	Ist July to 31st July'87	Allahabad (U.P.)		Theatre Workshop
2.	14.7.87	Jaipur (Rajasthan)		Sanskritik Sandhya (Folk Songs)
3.	26.7.87	Allahabad (U.P.)		Sanskritik Sandhya (Kajri Folk Songs and dances)
4.		Sangrur District (Punjab)		Milvartan Panjab yatra of Artistes from NCZCC
	28.7.87	i) Village	Dugga	
	28.7.87	ii) "	Bahapur	
	28.7.87	iii) "	Kunran	
	28.7.87	iv) "	Bhamabad	
	28.7.87	v) "	Killa	
	28.7.87	vi) "	Badrukhan	
	29.7.87	vii) "	Jakhepal	
	29.7.87	viii) "	Buxiwala	
	29.7.87	ix) "	Ugrahan	
	29.7.87	x) "	Daula Singhwala	
	29.7.87	xi) "	Dharamgarh	
	29.7.87	xii) "	Kankawale	
	30.7.87	xiii) "	Rudke	
	30.7.87	xiv) "	Pakhwa	
	30.7.87	xv) 2	Dhula	
	30.7.87	xvi) Village	Dhulkot	Milvartan Panjab Tour in the District Sangrur Contd.
	30.7.87	xvii) "	Dadran	
	30.7.87	xviii) "	Kanke	
	31.7.87	xix) "	Meemsa	
	31.7.87	xx) "	Badurpur Sodian	
	31.7.87	xxi) "	Mahna	
	31.7.87	xxii) "	Cheev	
	31.7.87	xxiii) "	Burj	
	31.7.87	xxiv) "	Goran	
5.	31.7.87	Allahabad		Closing Function of Theatre Workshop

No.	Date	Place	Event
1		2	

Month AUGUST ,1987.

No.	Date	Place	Event
1.	1.8.87	Sangrur City	Milvartan Punjab yatra of Artistes from NCZCC
2.		Allahabad (U.P.)	Lok Rang (Folk dances of Rajasthan
3.		Patiala District	Milvartan Punjab yatra of Artistes from NCZCC
	3.8.87	i) Village Gaziawale	
	4.8.87	ii) " Bhamana	
	4.8.87	iii) " Talwandi Malik	
	4.8.87	iv) " Khatrawale	
	4.8.87	v) " Namanda	
	4.8.87	vi) " Fatehgarh Chanan	
	4.8.87	vii) " Nanko	
	5.8.87	viii) " Maugrewale	
	5.8.87	ix) " Shudhewela	
	5.8.87	x) " Sakrawali	
	5.8.87	xi) " Cheswala	
	5.8.87	xii) " Vadsan	
	5.8.87	xiii) " Kalamajra	
	6.8.87	xiv) " Thuha	
	6.8.87	xv) " Rampur Khurd	
	6.8.87	xvi) " Fatehpur Garhi	
	6.8.87	xvii) " Jasewale	
	6.8.87	xviii) " Jalalpur	
	6.8.87	xix) " Nandpur Kalal	
	7.8.87	xx) Kullapur sadiqpur	
	7.8.87	xxi) " Main Majre	
	7.8.87	xxii) " Reyelo	
	7.8.87	xxiii) " Gokla Kotla	
	7.8.87	xxiv) " Jhumendgarh	
	8.8.87	xxv) " Baradari Shahr Patiala	
	9.8.87	xxvi) " -do -	
4.	11.8.87	Alwar(Rajasthan)	Kajri Sandhya
5.	12.8.87	Jaipur "	Kajri Sandhya
6.	13.8.87	Bundi "	Kajri Sandhya
7.	14.8.87	Allahabad (U.P.)	Jyotirgamaya Special dance drama depicting the freedom movement on the eve of 40th Anniversary of Independence day
8.	15.8.87 to 23.8.87	Allahabad University	Freedom struggle and Allahabad Exhibition of Paintings and Photographs

No.	Date	Place	Event
1		2	
			Month AUGUST ,1987(Contd.)
9.		Leh-Laddakh 22.8.87 - One show 23.8.87 - Two shows 24.8.87 - Two shows 25.8.87 - Two shows 26.8.87 - Two shows 27.8.87 - Two shows 28.8.87 - Two shows 29.8.87 - Two shows 30.8.87 - One show Total - 15 Shows	Cultural programmes at Our India Exhibition from 18th August to 30th August.
10.	27.8.87	Kendriya Vidyalaya Leh	Cultural Programme
11.	28.8.87	For the Troops, Leh	Cultural Programme
12.	29.8.87	For Air Force	Cultural Programme
13.	30.8.87	For Himank Project of Border Road Organisation	Cultural Programme
14.	31.8.87	Almora (U.P.)	Cultural Programme at Nanda Devi Mala
			Month SEPTEMBER ,1987
1.	1.9.87	Kota (Rajasthan)	Sanskritik Sandhya Kathak dance performance
2.	3.9.87	Jaipur (Rajasthan)	- do -
3.	4.9.87	Khetrinagar (Rajasthan)	- do -
4.	13.9.87	Nainital	Cultural Programme in connection with Pt. Govind Vallabh Centenary Celebration Folk dances of India
5.	14.9.87	Nainital	Cultural Programme in connection with Pt. Govind Vallabh Pant Centenary celebration (1) Kathak Dance (2) Folk Dances of India
6.	14.9.87	Allahabad (U.P.)	Homage to Smt. Maha Devi Varma (Public meeting to pay tributes to the departed soul)

No.	Date	Place		Event
1		2		

Month SEPTEMBER ,1987 (Contd.)

No.	Date	Place		Event
7.	17.9.87	Delhi		Release of the Journal Sanskriti Sangam and Cultural Programme Dance trio in Kuchipudi. Kathak and Odissi style
8.	15.9.87 to 24.9.87 Total 10 Programmes	Allahabad		Allahabad Natya Vividha
9.	24.9.87	Allahabad		Odissi Nritya Sandhya
10.	25.9.87	Allahabad		Theatre Seminar
11.	26.9.87	Allahabad		Sanskritik Sandhya

Month OCTOBER ,1987

No.	Date	Place		Event
1.	2.10.87	Allahabad		Prarthana Sabha
2.	9.10.87	Delhi	- Jhandewalan	Puppet Shows in chain (Ram Lila)
3.	10.10.87	"	- Kabir Basti Malka Gang	"
4.	12.10.87	"	- Kalyanpuri	"
5.	13.10.87	"	- Padam Nagar	"
6.	14.10.87	"	- Hauz kazi	"
7.	15.10.87	"	- Masjid Moth	"
8.	16.10.87	"	- Adarsh Nagar	"
9.	17.10.87	"	- Lahori Gate	"
10.	14.10.87	Allahabad		Sanskritik Sandhya Sham-E-Ghazal
11.	18.10.87	Allahabad		Symposium-Sati; A burning issue
12.	28.10.87	Kurukshetra University (Haryana)		Lecture with audio-Visual aid on Ajanta Paintings
13.	29.10.87	Delhi		"
14.	28.10.87	Delhi		Cultural Programme
15.	29.10.87	Delhi		"
16.	30.10.87	Delhi		"

Report
OF
West Zone Cultural Centre

MONTH AUGUST, 1987

The activities of West Zone Cultural Centre included workshops and cultural programmes. To begin with, a fifteen day camp from August 5th to 20th was organised by the centre at Bhadrawati, Maharashtra. Six ceramic artists, two each from Rajasthan, Maharashtra and Gujrat, participated in this programme.

The centre organised a workshop on toy making from August 3rd to September 3rd for mute children at the Deaf School, Udaipur. Thirty children were given training in toy making. Seventy toys were made by the children. These will be displayed in a special function on world Disabled Day.

A Bal Natya Shivir was organised from August 15th to 21st in which children, a few of them disabled, participated. Besides cultural programmes, a painting exhibition was organised at Sansar Kendra, Ahmedabad.

On August 22nd and 23rd, the centre organised folk dances and songs and also a pantomime show at Udaipur for Rajasthan Krishak Samaj.

On August 27th was held the closing function of the Tribal Drama workshop at village Khalia, Udaipur. There were twenty-two village participants in this programme.

On August 28th a pantomime show was staged at Maharashtra Bhawan, Udaipur. The programme was both educative and entertaining.

A Theatre workshop was held at Sudharma Vidyalaya, Udaipur, in which one hundred and forty children participated. The workshop was from July 15th to August 30th. On August 31st was held the closing fuction of this workshop in which children presented a cultural programme. Besides this, the centre is imparting training to school children and youth in different art forms, at Haveli.

डा० हरिहर निवास द्विवेदी

२३ अप्रैल १९८७ को ग्वालियर के सुप्रसिद्ध साहित्यकार डा० हरिहर निवास द्विवेदी का अकस्मात् निधन हो गया। वे हिन्दी के प्रबल समर्थकों में थे और हर क्षेत्र की सांस्कृतिक विधाओं में रुचि लेते थे। उन्होंने ४० वर्ष पूर्व "विक्रम शती स्मृति" ग्रंथ का सम्पादन किया था। वे "तानसेन" तथा कई ग्रंथ, शोध लेखों के लेखक थे। इधर उन्होंने बड़े परिश्रम से आदिकाल से पन्द्रहवीं शती तक का ग्वालियर संभाग का इतिहास "गोप-क्षेत्र" ग्रंथ लिखा। इस ग्रन्थ के मुद्रण का प्रयास किया जा रहा है।

"संस्कृति संगम" के लिए उन्होंने एक लेख भेजने की कृपा की थी। वह पत्रिका के प्रवेशांक में प्रकाशित किया गया है।

श्री गजानन जोशी

सुप्रसिद्ध वायलिन-वादक तथा स्वर लिपिकार श्री गजानन जोशी का २८ जून १९८७ को बम्बई में ७६ वर्ष की आयु में स्वर्गवास हो गया। जोशी जी बम्बई विश्वविद्यालय में संगीत विभाग के प्राचार्य रहे थे। वे शिवानंद स्वामी संगीत प्रतिष्ठान के संस्थापक थे। वे बम्बई, इंदौर तथा लखनऊ स्थित आकाशवाणी केंद्रों से सलाहकार के रूप में सम्बद्ध रहे।

जोशी जी को १९७२ में संगीत नाटक अकादमी तथा १९८४ में सुर श्रृङ्गार संसद ने सम्मानित किया।

मध्य प्रदेश की सरकार ने उन्हें १९८५ में "तानसेन" सम्मान पुरस्कार प्रदान किया।

इन दोनों विभूतियों के प्रति *उत्तर-मध्य क्षेत्र सांस्कृतिक केन्द्र* सादर श्रद्धांजलि अर्पित करता है।

भवई नृत्य—मीना चोधरी

रंग कार्यशाला के प्रशिक्षणार्थी—श्री वी० वी० कारन्त के साथ
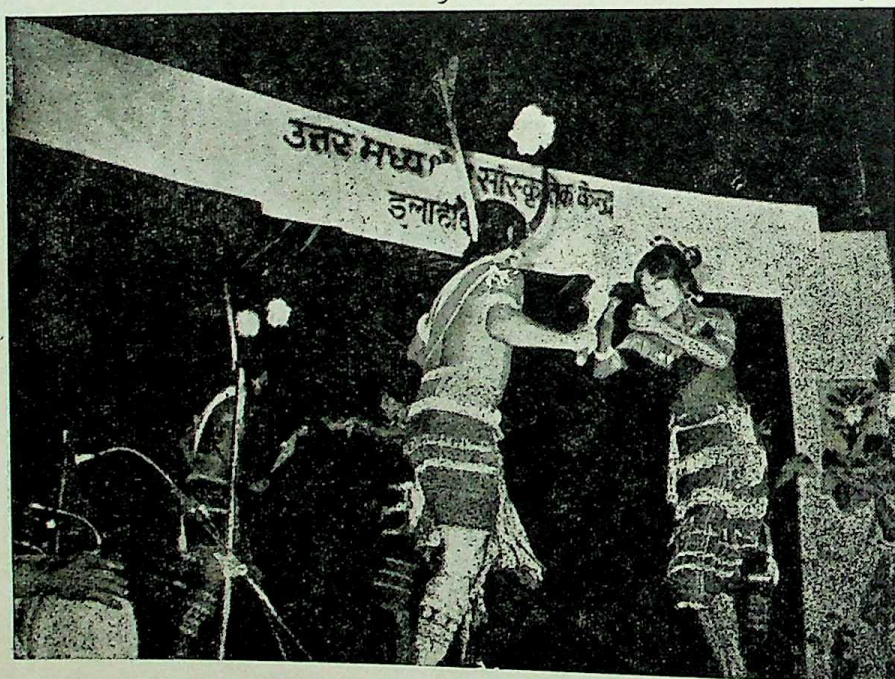
मनीपुरी नृत्य
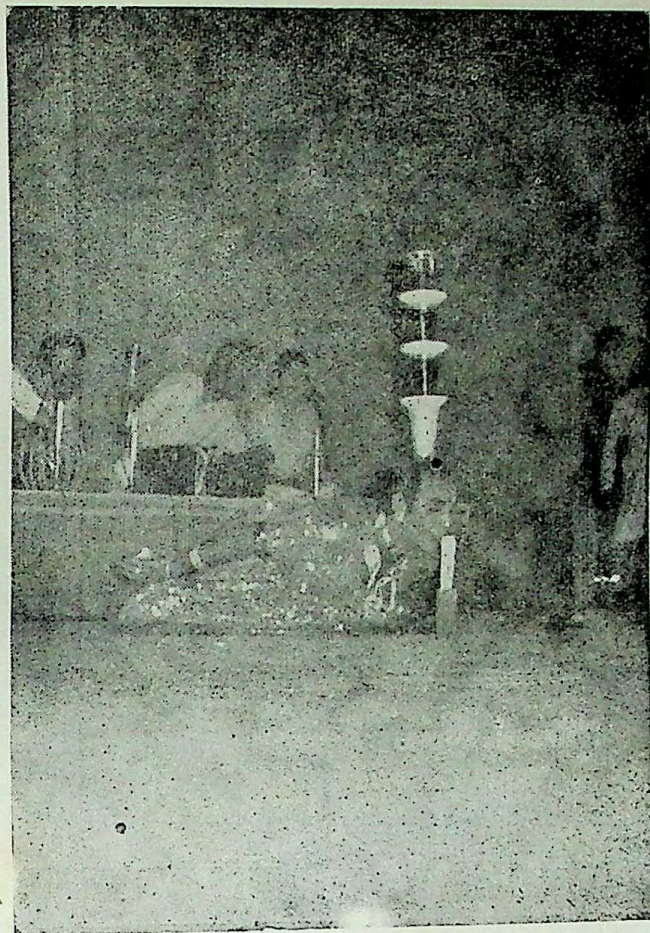
भवई नृत्य—रूपसिंह शेखावत

राई नृत्य—मध्य प्रदेश
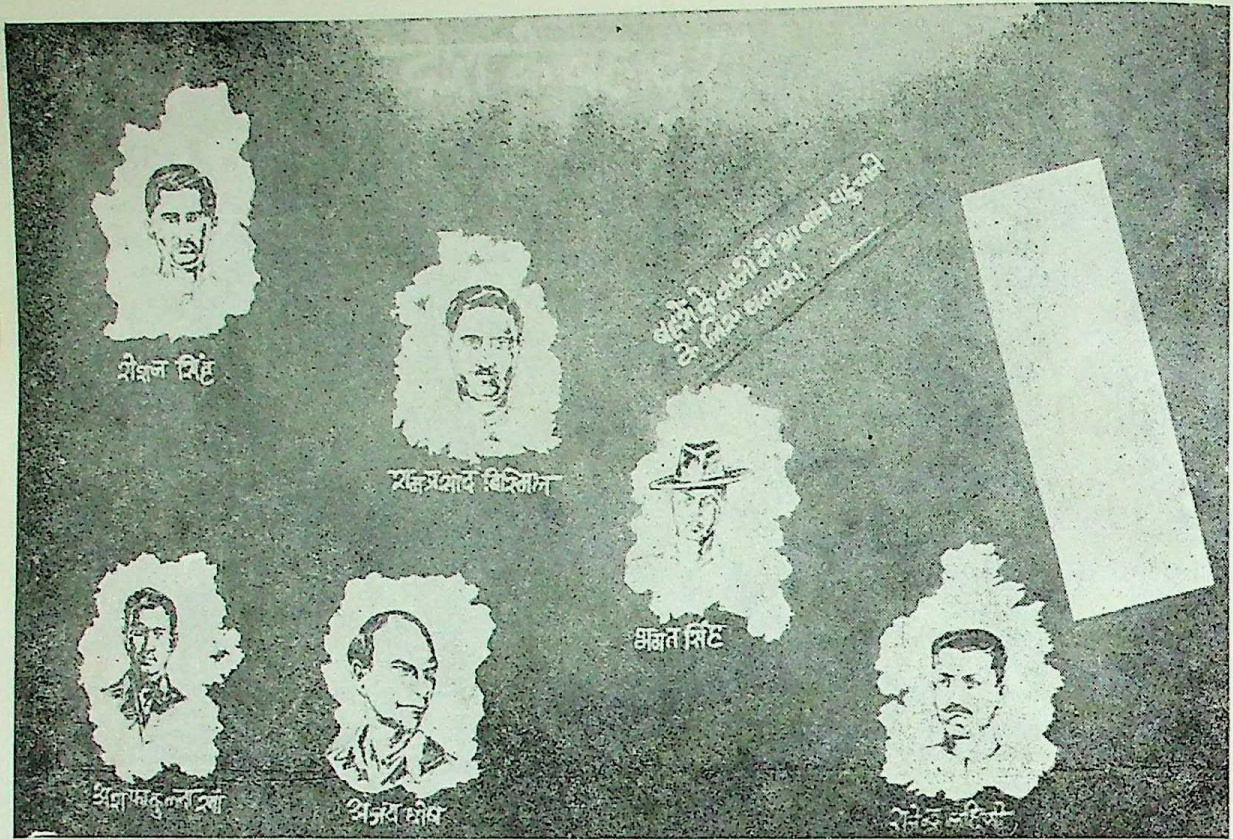
चित्र-प्रदर्शनी—स्वाधीनता आन्दोलन और इलाहाबाद

चित्र-प्रदर्शनी—स्वाधीनता आन्दोलन और इलाहाबाद